अष्टांग योग

सन्दर्भ (References)

1. महर्षि पतंजलि-कृत "योग-दर्शन", हिन्दी व्याख्या सहित, गीताप्रेस, गोरखपुर
2. "योग-दर्शन का हिन्दी भाष्य", पण्डित राजा राम, साहित्य प्रचारक मंडल, लाहौर, 1922
3. "श्री विष्णु पुराण", हिन्दी अनुवाद सहित, गीताप्रेस, गोरखपुर
4. "Yog – In Synergy with Medical Science", Acharya Balkrishna, Divya Prakashan, Hardwar, 2007.

महर्षि पतंजलि ने मनुष्य मात्र के आध्यात्मिक कल्याण हेतु "अष्टांग योग" का विधान अपने ग्रन्थ "योग दर्शन" (जिसे "योग सूत्र" के नाम से भी जाना जाता है) में विस्तृत विवरण के साथ किया है। इसी को मुख्य आधार लेते हुए अष्टांग योग का अर्थ, उद्देश्य, परिणाम तथा इसके आठों अंगों का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

'योग' का अर्थ व उसका परिणाम

- योग शब्द का शाब्दिक अर्थ है - "जुड़ना अथवा जोड़ना", और इसका भावात्मक अर्थ है - "परम-सत्य, परमात्मा या ब्रह्म से जुड़ना" अथवा दूसरे शब्दों में "चित्त को परमात्मा से जोड़ना"।
- **महर्षि पतंजलि ने "योग दर्शन" के प्रथम पाद ("समाधि पाद") में योग की सरल परिभाषा तथा योग का सर्वोपरि परिणाम इस प्रकार बताए हैं –**

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥१.२॥

अर्थात – "चित्त की वृत्ति का निरोध (सर्वथा रोकना) योग है।"

दूसरे शब्दों में – "चित्त को स्थिर करने को योग कहते हैं।" (योग दर्शन - 1.2)

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥१.३॥

अर्थात – "तब (योग-साधना के द्वारा चित्त स्थिर हो जाने पर) द्रष्टा (आत्मा) अपने निर्मल स्वरूप में स्थित हो जाता है।" (योग दर्शन - 1.3)

'अष्टांग योग' का अर्थ व उसका परिणाम

- अष्टांग योग का अर्थ है - "आठ अंगों (limbs) वाली योग-साधना, जिसके द्वारा परम-सत्य, परमात्मा या ब्रह्म से जुड़ा जा सकता है।"
- **महर्षि पतंजलि ने "योग दर्शन" के द्वितीय पाद ("साधन पाद") में अष्टांग योग की परिभाषा तथा उसके अन्तिम परिणाम को इस प्रकार बताया है –**

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिरा विवेकख्यातेः ॥२.२८॥

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि ॥२.२९॥

अर्थात – "यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि - योग के इन आठ अंगों का अनुष्ठान करने (आचरण में लाने) से योगी के चित्त की अशुद्धि का क्षय (नाश) होकर उसके ज्ञान का प्रकाश विवेक-ख्याति पर्यन्त बढ़ता जाता है।" (योग दर्शन – 2.28, 2.29)

व्याख्या – योग के इन आठ अंगों के अनुष्ठान में जैसे-जैसे पुरुष आगे बढ़ता है, वैसे-वैसे उसके चित्त की अशुद्धि घटती जाती है और ज्ञान का प्रकाश बढ़ता जाता है, जब तक कि उसे 'प्रकृति और पुरुष' का विवेक-ज्ञान नहीं होता। योग के अंगों का अनुष्ठान चित्त की अशुद्धि के निवारण का कारण है, और विवेक ख्याति की प्राप्ति का कारण है। (Ref. 2, पृष्ठ 115-116)

आठ अंगों का वर्गीकरण व अनुष्ठान

- अष्टांग योग के उपरोक्त आठ अंग इसी क्रम में साधक के 'बाहरी समाज के साथ परस्पर प्रभाव' (interaction with society) से आरम्भ होकर उसके 'अन्तःकरण' और अन्ततः 'आत्मा तक' पहुँचते हैं।
- इनमें से पहले चार अंग (यम, नियम, आसन व प्राणायाम) 'बहिरंग योग' और अन्तिम तीन अंग (धारणा, ध्यान व समाधि) 'अन्तरंग योग' माने जाते हैं। 'प्रत्याहार' बहिरंग योग और अन्तरंग योग के बीच सेतु का कार्य करता है।
- साधक को चाहिए कि सबसे पहले वह प्रथम अंग (अर्थात 'यम') का अनुष्ठान (पालन) व अभ्यास करे, फिर वह अपने अनुष्ठान में द्वितीय अंग (अर्थात 'नियम') को शामिल कर ले, फिर तीसरे अंग (अर्थात 'आसन') को साथ लेवे, इत्यादि। इस प्रकार अन्त में वह आठों अंगों का अनुष्ठान व अभ्यास करते हुए 'पूर्ण योगी' बन सकेगा।

अष्टांग योग के प्रथम और द्वितीय अंग – 'यम' और 'नियम'

- **'यम' चरित्र के वे गुण हैं जो साधक के समाज में उच्चतम नैतिक आचरण के लिए आवश्यक हैं, जबकि 'नियम' चरित्र के वे गुण हैं जो स्वयं को ईश्वर-चिन्तन के योग्य बनाने के लिए आवश्यक हैं।**

यम क्या हैं ?

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥२.३०॥

अर्थात -- **अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी कि भावना न रखना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (संग्रह न करना) – ये पाँच यम हैं।** (योग दर्शन – 2.30)

नियम क्या हैं ?

शौचसंतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥२.३२॥

अर्थात -- **शौच (बाहर और अन्दर की शुद्धि), संतोष, तप (स्वधर्म के पालन में होने वाले कष्टों को सहर्ष सहन करना), स्वाध्याय (आत्म-अध्ययन, आत्म-चिन्तन और आत्म-विश्लेषण) और ईश्वर-प्रणिधान (ईश्वर की शरण होना) -- ये पाँच नियम हैं।** (योग दर्शन – 2.32)

- **'क्रिया योग' --** महर्षि पतंजलि ने तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान -- योग के इन तीन साधनों के लिए एक सामूहिक शब्द 'क्रिया योग' का प्रयोग करते हुए इनका अविद्या आदि क्लेशों को मिटाने और साधना की सिद्धि में विशेष महत्त्व बतलाया है।

अष्टांग योग के तीसरे और चौथे अंग – 'आसन' और 'प्राणायाम'

- **आसन क्या है ?** – "निश्चल (बिना हिले-डुले) सुखपूर्वक बैठने का नाम आसन है।" (योग दर्शन – 2.46)
- **आसन की सिद्धि --** शरीर को सीधा और स्थिर करके सुख-पूर्वक बैठ जाने के बाद शरीर-सम्बन्धी सभी चेष्टाओं का त्याग कर परमात्मा में मन लगाने से आसन की सिद्धि होती है। (योग दर्शन – 2.47)
- **प्राणायाम क्या है ? --** "आसन की सिद्धि होने के बाद (यानी आसन में स्थिर होकर) श्वास और प्रश्वास (प्राण-वायु की शरीर में प्रविष्टि और शरीर से निष्कासन) की गति का निरोध/ नियंत्रण प्राणायाम है।" (योग दर्शन – 2.49)
- **प्राणायाम के तीन प्रकार --** प्राण-वायु को इच्छानुसार बाहर निकालकर बाहर ही रोके रखना (बाह्य-वृत्ति), अन्दर लेकर अन्दर ही रोके रखना (आभ्यन्तर-वृत्ति) और उसकी गति को रोक देना (स्तम्भ-वृत्ति) -- ये तीन प्रकार के प्राणायाम हैं। (योग दर्शन – 2.50)
- **प्राणायाम का परिणाम --** "प्राणायाम के अभ्यास से ज्ञान के ऊपर पड़ा हुआ आवरण क्षीण हो जाता है और मन में 'धारणा' की योग्यता भी आ जाती है, अर्थात मन को चाहे जिस जगह सुगमता से स्थिर किया जा सकता है।" (योग दर्शन – 2.52, 2.53)

अष्टांग योग का पाँचवां अंग – 'प्रत्याहार'

- आसन में स्थिर होकर प्राणायाम का अभ्यास करते-करते मन और इन्द्रियां शुद्ध हो जाते हैं। उसके बाद इन्द्रियों की प्रवृत्ति को बाहर की ओर से समेट कर अन्दर मन में विलीन करने के अभ्यास का नाम 'प्रत्याहार' है। (योग दर्शन – 2.54)
- प्रत्याहार सिद्ध हो जाने पर योगी की इन्द्रियां उसके सर्वथा वश में हो जाती हैं और वह अन्तरंग योग के योग्य हो जाता है। (योग दर्शन – 2.55)

अष्टांग योग के छठे, 7वें तथा 8वें अंग – 'अन्तरंग योग'

- धारणा, ध्यान तथा समाधि -- इन तीनों को 'अन्तरंग योग' के नाम से जाना जाता है। इनका वर्णन "योग दर्शन" के "विभूति पाद" नमक तृतीय पाद में हुआ है।
- **धारणा क्या है ? --** शरीर के भीतर या बाहर कहीं भी किसी एक 'देश' में चित्त को ठहराना 'धारणा' है।" (योग दर्शन – 3.1)
- **योग दर्शन–3.1 की व्याख्या --** नाभि चक्र, हृदय कमल आदि शरीर के 'भीतरी देश' हैं और आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, कोई भी देवता, कोई भी मूर्ति या कोई भी बाहरी पदार्थ 'बाहरी देश' हैं। इनमें से किसी एक (यानी एक देश) में चित्त की वृत्ति को लगाने का नाम 'धारणा' है।

- **ध्यान क्या है ? --** जिस ध्येय वस्तु में चित्त को लगाया जाए, उसी में चित्त का एकाग्र हो जाना 'ध्यान' है। (योग दर्शन – 3.2)
- **योग दर्शन–3.2 की व्याख्या –** ध्येय-मात्र की एक ही तरह की चित्त-वृत्ति का प्रवाह चलना और उसके बीच में किसी भी दूसरी चित्त-वृत्ति का न उठना 'ध्यान' है।
- **समाधि क्या है ? --** जब ध्यान में केवल ध्येय-मात्र की प्रतीति होती है और चित्त का अपना स्वरूप शून्य सा हो जाता है, तब वही ध्यान 'समाधि' बन जाता है। (योग दर्शन – 3.3)
- **श्री विष्णु पुराण के छठे अंश के सातवें अध्याय में धारणा, ध्यान और समाधि के बारे में सरल शब्दों में ज्ञान उपलब्ध है, जिसके कुछ अंश नीचे प्रस्तुत हैं।**
  - "चित्त का भगवान् में स्थिर करना ही 'धारणा' कहलाता है।" (विष्णु पुराण – 6.7.78)
  - "जिसमें परमेश्वर के रूप की प्रतीति होती है, ऐसी जो विषयान्तर (digression) की इच्छा से रहित कभी न रुकने वाली धारा है, उसे ही 'ध्यान' कहते हैं।" (विष्णु पुराण – 6.7.91)
  - "समाधि से होने वाला भगवान् से साक्षात्कार का विज्ञान ही परब्रह्म तक पहुँचाने वाला है।" (विष्णु पुराण – 6.7.93)

समाधि की सिद्धि

- किसी एक ध्येय में धारणा, ध्यान और समाधि -- इन तीनों का होना 'संयम' कहलाता है। 'संयम की सिद्धि' अर्थात 'समाधि की सिद्धि' हो जाने से बुद्धि का प्रकाश होता है, अर्थात योगी की बुद्धि में अलौकिक ज्ञान-शक्ति आ जाती है। (योग दर्शन – 3.4, 3.5)
- किस ध्येय में समाधि सिद्ध करने पर योगी को क्या फल मिलता है, इसका विवरण "योग दर्शन" के "विभूति पाद" में 40 सूत्रों (सूत्र संख्या 3.16 से 3.55) में मिलता है।
- लेकिन समाधि का वास्तविक फल 'कैवल्य' है, जिसका सरल भाषा में अर्थ 'सर्वथा अकेलापन' है। 'कैवल्य' का विवेचना पूर्वक वर्णन योग दर्शन के "कैवल्य पाद" नामक चौथे व अन्तिम पाद में किया गया है।

उपसंहार

- **लेख को समाप्त करने के लिए अष्टांग योग के बारे में आचार्य बालकृष्ण के दो वाक्य Ref. 4 के पृष्ठ 7 से यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं –**
  - "The methodology which every individual can adopt and practise to attain ultimate happiness, tranquility and bliss in life is none other than Saint Patanjali's Ashtang Yog."
  - "Anyone in search of self-identity and the ultimate truth should practise Ashtang Yog."